अध्याय-16

पर्यावरण के मुद्दे

MPBOOKSOLUTION.in

प्रदूषक (Pollutants)- प्रदूषक मनुष्य व्दारा बनाए गए, प्रयोग में लाये गए अथवा फेंकें गए ऐसे पदार्थ या पदार्थों के अवशेष हैं, जो वातावरण में रहते हुए उसे किसी-न-किसी रूप में प्रदूषित करते है|

प्रदूषकों के प्रकार (kinds of pollutants)- ओडम ने प्राकृतिक विघटन के आधार पर प्रदूषकों को निम्नलिखित दो भागों में विभाजित किया है–

1. क्षयकारी प्रदूषक (Biodegradable Pollutants)- गन्दी लानियों व्दारा निकले कार्बनिक पदार्थों की मात्रा यदि इतनी रहती है कि सूक्ष्म जीवधारियों व्दारा उनका पूर्ण विघटन किया जा सके, तो वे पारिस्थितिक तन्त्र के लिए उपयोगी सिध्द होते है, क्योंकि इससे विभिन्न तत्वों का पुनः चक्रीकरण होता है परन्तु यदि वातावरण में इन प्रदूषकों की मात्रा इतनी अधिक हो जाये कि सूक्ष्म जीवधारियों व्दारा उनका विघटन पूर्णरूप से नही हो सके, तो ऐसे पदार्थ वातावरण को प्रदूषित करने लगते है| घरेलू वाहित मल (Domestic sewage), कपड़ा, कागज़, कृषि अपशिष्ट, जन्तुओं एवं पौधों के मृत शरीर, कूड़ा-करकट, लकड़ी आदि, क्षयकारी प्रदूषक कहलाते है; क्योंकि वातावरण में कुछ समय तक रहने के बाद इनका स्वतः विघटन होने लगता है|

2. अक्षयकारी प्रदूषक (Non-biodegradable pollutants)- ऐसे प्रदूषक जिनका सूक्ष्म जीवधारियों व्दारा विघटन नही होता अथवा बहुत कम विघटन होता है और ये वातावरण में एकत्रित होकर उसे प्रदूषित करते है| अतः इन्हें अक्षयकारी प्रदूषक कहते है| जैसे- एलुमिनियम, रेडियोधर्मी पदार्थ, लौह, पारे के लवण, सीसा, आर्सेनिक, फिनोल के कुछ यौगिक; DDT, प्लास्टिक आदि|

प्राथमिक एवं व्दितीयक प्रदूषक-

1. प्राथमिक प्रदूषक (Primary pollutants)- ऐसे प्रदूषक जो विभिन्न स्रोतों से जिस अवस्था में मुक्त होते है, उसी अवस्था में पाए जाते है; जैसे- कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड्स, सल्फर डाइऑक्साइड, काँच, प्लास्टिक, DDT आदि|

2. व्दितीयक प्रदूषक (Secondary pollutants)- व्दितीयक प्रदूषक का निर्माण प्राथमिक प्रदूषकों की वायुमंडल में उपस्थित सामान्य यौगिकों से अभिक्रिया व्दारा होता है; जैसे- स्मोग, PAN (Peroxy Acetyl Nitrate); ओजोन, ऐल्डिहाइडा आदि|

मात्रात्मक एवं गुणात्मक प्रदूषक-

1. मात्रात्मक प्रदूषक (Quantitative pollutants)- ये प्रकृति में नही पाए जाते हैं तथा ये मनुष्य व्दारा उत्पादित हानिकारक रासायनिक पदार्थ या कारक होते हैं; जैसे- शाकनाशी (herbicides) एवं कीटनाशी (insecticides) आदि|

2. गुणात्मक प्रदूषक (Qualitative pollutants)- ये प्राकृतिक घटक होते हैं, किन्तु इनकी सान्द्रता सामान्य से अधिक हो जाने पर ये प्रदूषक के सामान कार्य करते है; जैसे- कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड आदि|

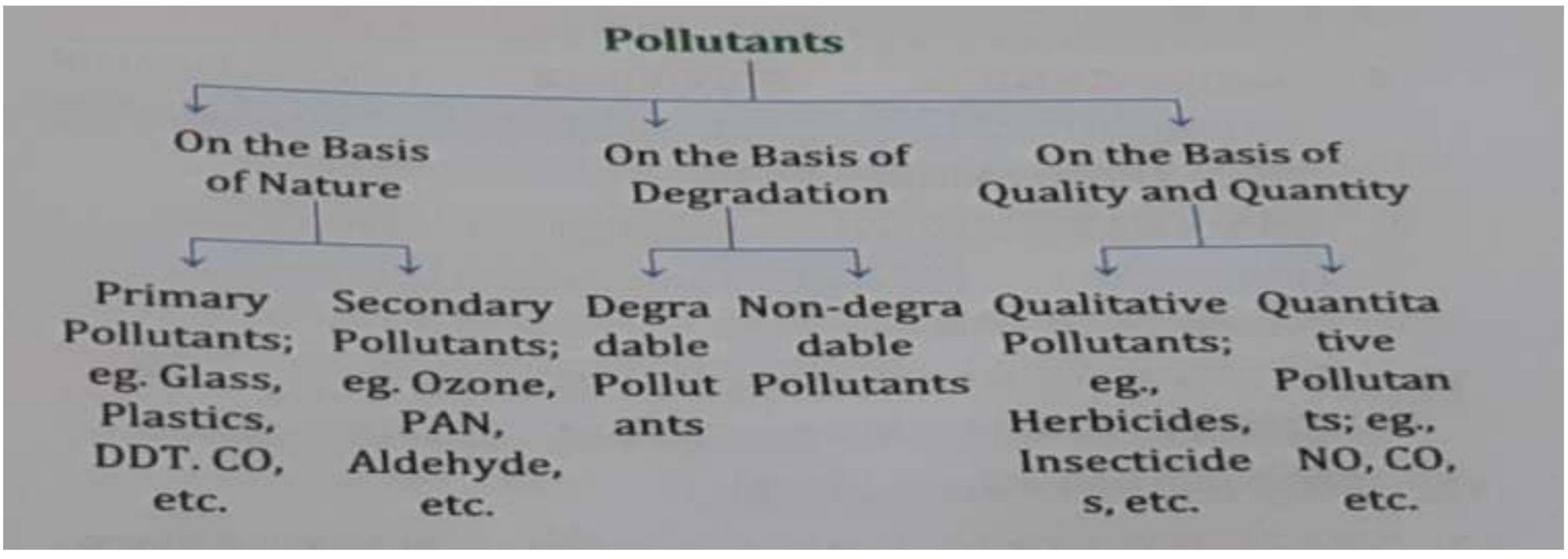

मुख्य पर्यावरणीय प्रदूषक- वायु, जल एवं भूमि को प्रदूषित करने वाले विभिन्न मुख्य प्रदूषक निम्नलिखित है–

1. **कणिकामय पदार्थ-** जैसे-धूल (dust), धुआँ (smoke), कालिख अथवा कज्जल (soot), रेत के कण (grit) आदि|

2. **गैसें (gases)-** जैसे- नाइट्रोजन के ऑक्साइड (NO_x), सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), कार्बन मोनोऑक्साइड (CO), हैलोजन (क्लोरीन, ब्रोमीन, आयोडीन), हाइड्रोजन सल्फाइड गैस (H_2S) आदि|

3. **कार्बनिक पदार्थ-** जैसे- बेन्जीन, ईथर, एसिटिक अम्ल, बेन्जोपाइरिन, ऐल्किल बेन्जीन सल्फोनेट (ABS) आदि|

4. **धातुएँ-** जैसे- सीसा, पारा, लोहा, कैडमियम, आर्सेनिक, क्रोमियम, निकिल आदि|

5. **अम्ल की बूँदे-** जैसे- नाइट्रिक अम्ल, सल्फ्यूरिक अम्ल आदि|

6. **घरेलुल अपमार्जक (domestic detergents)-** जैसे- साबुन, सोडा, सर्फ, पेट्रोलयुक्त साबुन, कार्बनिक पदार्थ आदि|

7. **कृषि रसायन-** जैसे- शाकनाशी (Herbicide), कीटनाशी (Insecticide), खरपतवारनाशी (Weedicides) आदि|

8. **रेडियोधर्मी पदार्थ-** जैसे- स्ट्रोन्सियम, कोबाल्ट, सीजियम, यूरेनियम, प्लूटोनियम आदि|

9. **ध्वनि-** जैसे- तीव्र शोर|

10. **जैव-प्रदूषक-** जैसे- पौधों के परागकण, कवकों के बीजाणु, जीवाणु आदि|

प्रदूषण (Pollution)- वायु, जल एवं भूमि की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं का वह अवांछनीय परिवर्तन, जो मनुष्य एवं अन्य जन्तुओं, पौधों, भवनों, सांस्कृतिक सम्पदाओं, प्राकृतिक सम्पदाओं तथा जीवधारियों को किसी भी रूप में हानि पंहुचाता है, प्रदूषण कहलाता है|

प्रदूषण के प्रकार–

प्रदूषण को मुख्यतः निम्नलिखित पाँच भागों में बाँटा जा सकता है–

1. वायु प्रदूषण
2. जल प्रदूषण
3. मृदा प्रदूषण
4. ध्वनि प्रदूषण
5. रेडियोधर्मी प्रदूषण

1. वायु प्रदूषण एवं इसका नियंत्रण

वायुमण्डल में भिन्न-भिन्न प्रकार की गैसें एक निश्चित अनुपात में पायी जाती है| वायु में इन गैसों का अनुपात निम्नवत है–

गैसों के नाम	मात्रा (प्रतिशत में)
नाइट्रोजन	78.03
ऑक्सीजन	20.99
ऑर्गन	0.9323
कार्बन डाइ–ऑक्साइड	0.03
हाइड्रोजन	0.01
नियॉन	0.0018
हीलियम	0.0005
क्रिप्टॉन	0.0001
जेनॉन	0.000005

MPBOOKSOLUTION.in

उपर्युक्त गैसों का असंख्य जीवधारियों और वायुमण्डल के बीच चक्रीकरण (Cycling) होता रहता है| जीवधारियों व्दारा ही ऑक्सीजन एवं कार्बन डाइऑक्साइड वायुमंडल में संतुलित मात्रा में रहती है| परन्तु मनुष्य के विभिन्न क्रियाकलापों व्दारा वायुमंडलीय गैसों का सन्तुलन बिगड़ रहा है|

वायु प्रदूषक (Air pollutants)- वे पदार्थ जो वायु प्रदूषण के लिए उत्तरदायी होते है उन्हें वायु प्रदूषक कहते है| यद्यपि मानव जनित वायु प्रदूषण की मात्रा प्राकृतिक प्रदूषण (जैसे- परागकण, बीजाणु, ज्वालामुखी राख एवं गैसे तथा वन अग्नि) से बहुत कम होती है फिर भी यह अत्यधिक हानिकारक होती है; क्योंकि यह वायुमण्डल के निचले क्षेत्र में ही सीमित रहती है|

वायु प्रदूषक कणिकीय या गैसीय हो सकते है| ऐसे कणिकीय प्रदूषक जिनका व्यास 10 μm से अधिक होता है, स्वतः वायु में बैठ जाते हैं| 10μm से कम व्यास के छोटे कणिकीय प्रदूषक वायुमण्डल में लम्बे समय तक निलम्बित बने रहते है| अतः इन्हें निलम्बित कणिकीय पदार्थ (Suspended particulate matter=SPM) कहते है| यदि SPM का आमाप 1μm से कम होता है तो वह **एरोसोल** (Aerosol) कहलाता है| यह कोलायडी निलम्बन होता है जो धुआँ व फ्यूम के रूप में पाया जाता है| यदि SPM का आमाप 1μm से अधिक होता है तब इसे धूल या धुंध कहते है|

वायु प्रदूषण के स्रोत एवं प्रभाव-

1. सल्फर के यौगिक- ये सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2); सल्फर ट्राइऑक्साइड एवं हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S) के रूप में औद्योगिक चिमनियों, तेल शोधक कारखानों (Refineries); जीवाश्म ईंधन के दहन एवं बिजली पैदा करने वाले संयंत्रों से मुक्त होते हैं| SO_2 रन्ध्रों के व्दारा पौधों की पत्तियों में प्रवेश कर जल में घुलकर सल्फाइट व बाइसल्फाइट आयनों में बदल जाती है| इन आयनों की अधिक सान्द्रता कोशिकाकला एवं हरितलवकों को नष्ट करती है| इसकी उच्च सान्द्रता में पौधों की कोशिकाओं की मृत्यु भी हो सकती है| SO_2 से नेत्रों में जलन, ब्रोंकाइटिस, अस्थमा आदि रोग हो जाता है| चमड़े, धातु, इमारतों, पत्थरों, स्टील, कागज़ इत्यादि पर भी SO_2 का बुरा प्रभाव पड़ता है| यह गैस इन पदार्थों का क्रमिक क्षयीकरण करती है|

2. नाइट्रोजन के ऑक्साइड- औद्योगिक चिमनियों ऐअवं जीवाश्मी ईंधन; जैसे- कोयले एवं पेट्रोलियम पदार्थों के जलने से प्राप्त गैसों ममी नाइट्रोजन ऑक्साइड (NOx) काफी मात्रा में होती है|

नाइट्रोजन ऑक्साइडो में रंगहीन नाइट्रिक ऑक्साइड (NO) तथा लाल भूरे रंग की नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2) मुख्य वायुप्रदूषक है| वातावरण में इन गैसों की आवश्यकता से अधिक उपस्थिति आँखों, धमनियों, ह्रदय, यकृत एवं वृक्क आदि के लिए बहुत हानिकारक होती है| NO_2 की उपस्थिति परओक्सीऐसिटिल नाइट्रेट (PAN) के बनने में भी मुख्य रूप से भाग लेती है जो कि एक मुख्य व्दितीयक वायु प्रदूषक है|

3. कार्बन मोनोऑक्साइड- वातावरण में उपस्थित कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) की 90% मात्रा प्राकृतिक स्रोतों से मिलती है तथा सहश 10% कार्बन मोनोऑक्साइड ईंधन पदार्थों मुख्यत कोयले के जलने, स्वचालित वाहनों एवं अन्य अनेक कार्बनिक पदार्थों के अपूर्ण रूप से जलने से वातावरण में मिलती रहती है|

कार्बन मोनोऑक्साइड की, मनुष्य के रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन से क्रिया करने की क्षमता ऑक्सीजन की अपेक्षा लगभग 250 गुना अधिक होती है| अधिक कार्बन मोनोऑक्साइड युक्त वायु में कुछ देर तक रहने से श्वासावरोध हो जाने के कारण मृत्यु भी हो सकती है| अतः कभी भी सर्दियों में बन्द कमरे में कोयले की अंगीठी जलाकर नही सोना चाहिए|

4. कणिकीय पदार्थ- ये प्राकृतिक एवं मानवजनित स्रोतों से उत्पन्न ठोस कण या तरल बिन्दु (aerosol) होते है; जैसे- धूल, धुआँ, बीजाणु आदि| धुआँ (smoke) एक सामान्य वायु प्रदूषक है जिसमें ईंधन पदार्थों के अपूर्ण दहन के कारण अनेक ठोस कण वायुमण्डल में निलम्बित रहते है| गैसीय माध्यम में अति सूक्ष्म आकार के ऐसे कणों के विक्षेपण से उत्पन्न बादल को वायु-विलय (aerosol) कहते है| धुएँ (smoke) तथा कोहरे (fog) के संयोग से धुंध (smog) बनती है|

वायु प्रदूषण से मनुष्य के श्वसन तंत्र पर बुरा प्रभाव पड़ता है| इससे मनुष्यों में श्वसन सम्बन्धी बहुत से रोग; जैसे- फेफड़ों का कैन्सर, दमा (Asthma) और फेफड़ों से सम्बन्धित दूसरे रोग हो जाते है|

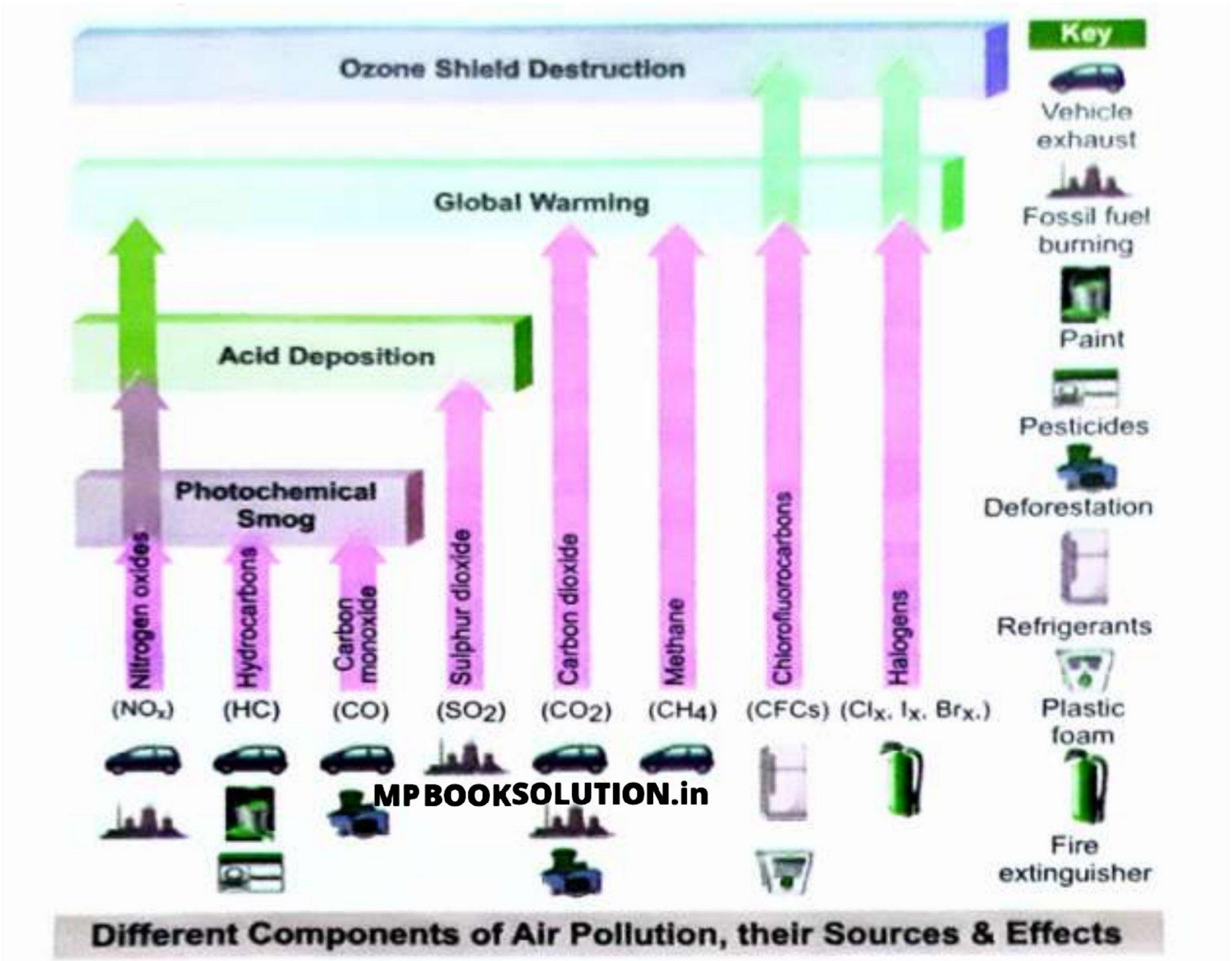

Different Components of Air Pollution, their Sources & Effects

वायु प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय- निम्नलिखित उपायों को अपनाकर वायु प्रदूषक को नियंत्रित किया जा सकता है–

1. स्वचालित वाहनों से उत्पन्न धुएँ को निर्वात नाल पर छन्ना (filter) तथा पश्च ज्वलक (after burner) आदि लगाकर कम किया जा सकता है| पेट्रोल में बेरियम यौगिक डालने से धुआँ कम निकलता है|

2. पेट्रोल से लेड तथा सल्फर को निकालकर इनके कारण होने वाले प्रदूषण को कम किया जा सकता है| वायु प्रदूषण के नियंत्रण हेतु वाहनों में उत्प्रेरक सम्परिवर्तक (Catalytic converter) के प्रयोग को सुनिश्चित किया जाना चाहिए|

3. वाहनों के आन्तरिक दहन इंजनों की संरचना में इनके निर्माताओं को कुछ ऐसे सुधार करने चाहिए जिससे ईधन का सम्पूर्ण दहन हो ताकि प्रदूषण करने वाले पदार्थ या प्रदूषण पदार्थ कम मात्रा में उत्पन्न हों|

4. रेल यातायात में कोयले तथा डीजल से चलने वाले इंजनों के स्थान पर विद्युत् इंजनों का प्रयोग किया जाना चाहिए|

5. कारखानों की चिमनियों की ऊंचाई समुचित होनी चाहिए तथा चिमनियों में स्थिर विद्युत् अवक्षेपण के प्रयोग व्दारा गैसों से प्रदूषक पदार्थों को पृथक किया जाना चाहिए|

जल प्रदूषण एवं इसका नियंत्रण- यदि जल में घुले पदार्थ आवश्यकता से अधिक मात्रा में एकत्रित हो जायें अथवा उसमें कुछ ऐसे पदार्थ एकत्रित हो जायें जो साधारणतया जल में उपस्थित नही होते हैं तो जल हानिकारक हो जाता है और प्रदूषित जल (Polluted water) कहलाता है|

जल प्रदूषण के कारण-

1. घरेलू अपमार्जक (Household Detergents)- अपनी दैनिक आवश्यकता के लिए मनुष्य अनेक पदार्थ प्रयोग में लाता है, जैसे- टिन के डिब्बे, बोतलें, प्लास्टिक के डिब्बे, जिंक और एलुमिनियम लगे कागज़ के थैले आदि| ये वस्तुएँ उपयोग के बाद सीधे ही या नालों से बहती हुई नदियों तक पहुँचती है| रसोईघर में बर्तन माँजने, स्नानघर में कपड़े धोने एवं धोबियों व्दारा अनेक प्रकार के अपमार्जक उपयोग में लाये जाते है, जो नालों के व्दारा तालाबों, नदियों या अन्य जलाशयों तक पहुँचते है| इन धोवनों में विभिन्न प्रकार के फॉस्फेट, नाइट्रेट, अमोनियम यौगिक, ऐल्किल बेन्जीन सल्फोनेट, धातु, हानिकारक अम्ल और क्षार नदियों तक पहुँचकर इसे दूषित करते है|

2. वाहित मलजल (Sewage)- प्रायः सभी बड़े शहरों की गन्दगी बड़े-बड़े बन्द नालों के सहारे नदियों में गिराई जाती है| वाहित मलजल के गिरने से जल में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है और बायोकेमिकल ऑक्सीजन डिमांड या **BOD** बहुत अधिक हो जाती है| वाहित मलजल में कार्बनिक पदार्थ और जैव प्रदूषक अधिक मात्रा में पाए जाते है| इनकी उपस्थिति जीवाणुओं और कवकों की संख्या में वृध्दि करते है| इन जीवों व्दारा अपघटन के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है जिससे जल में घुली ऑक्सीजन की मात्रा में कमी होती जाती है| इसके चलते जन्तुओं; जैसे- मछलियों की मृत्यु भी हो सकती है| अपघटन के कारण पीने का जल गन्दा हो जाता है एवं अनेक प्रकार के वायरसों एवं हानिकारक जीवाणुओं के व्दारा बीमारियाँ पैदा होती है|

3. औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Wastes)- व्यावसायिक नगरों; जैसे- कानपुर, मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता, अहमदाबाद आदि जगहों में स्थित बड़ी-बड़ी मीलों एवं कारखानों के अपशिष्ट पदार्थ नदियों में गिराए जाने से नदियों का पानी निरंतर दूषित होता रहता है| कारखानों से विभिन्न प्रकार के हानिकारक पदार्थ; जैसे- फिनोल (Phenol), साइनाइड, भारी धातु, तेल, धूल, कोयला आदि निकलकर मृदा जल एवं जलाशयों में पहुँचते रहते हैं|

4. कृषि स्रोत एवं उर्वरक (Agricultural Sources and Fertilizers)- उर्वरकों में नाइट्रेट, फॉस्फेट, पोटैशियम आदि का बहुत ज्यादा समावेश रहता है, जो वर्षा-जल के साथ निकट के जालाशयों में एवं अन्ततः पेयजल में भी मिल जाते है| सुपोषण के चलते जलाशयों में अनेक समस्याएँ पैदा हो जाती है एवं मानव के लिए यह बहुत हानिकारक होता है|

5. पीड़कनाशी (Pesticide)- इस वर्ग के अन्तर्गत कीटनाशो (Insecticide), कवकनाशी (Fungicide), शाकनाशी (Herbicide), कृन्तकनाशी (Rodenticide) आदि आते है| बहुत से पीड़कनाशियों का निम्नीकरण नही होता और उनके अवशेष जीवनपर्यंत भोजन श्रंखला व्दारा एक जीव से दूसरे जीवों में जाते है और मुख्यतः वसीय ऊतकों में जमा हो जाते हैं| जैव अनिम्नीकरणीय पदार्थ जैसे- DDT (Dichloro Diphenyl Trichloroethane), जब आहार श्रृंखला के एक पोषी स्तर से अगले पोषी स्तर में आतें हैं तो इनकी सान्द्रता में क्रमशः वृध्दि होती जाती है| इस क्रिया को जैव आवर्धन या बायोमैग्नीफिकेशन (Biomagnification) कहते है|

6. भारी धातुएँ- औद्योगिक अपशिष्टों, पीड़कनाशियों एवं खनन से विभिन्न प्रकार के भारी धातुओं के यौगिक अंततः निकट के जलाशयों में मिल जाते है| क्लोरीन एवं कास्टिक सोडा के कारखानों से पारा (mercury) जल में आ सकता है, जो जलीय जीवों एवं मछलियों में जमा हो सकता है| ऐसे दूषित जीवों को खाने से मनुष्य के शरीर में भी पारा पहुँच सकता है| जापान के मिनेमेटा खाड़ी में एक कारखाने व्दारा फेंकें जाने वाले पारे के कारण दूषित मचिल्याँ खाने से अनेक लोगों की मृत्यु होने की दुर्घटना प्रसिध्द है|

7. शव प्रवाह- धार्मिक अन्धविश्वास के चलते प्रायः गंगा, यमुना एवं अन्य नदियों में मानव एवं पशुओं के मृत शरीर को प्रावाहित कर देना जल प्रदूषण का एक महत्वपूर्ण कारण है| शवों या अधजले मांस के लोथड़े जब पानी में पहुँचते है तब जीवाणुओं व्दारा इनका अपघटन तेजी से होता हिया| फलस्वरूप जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिससे अनेक हानिकारक जीवाणु पैदा होते है जो विभिन्न रोगों के लिए जिम्मेदार होते हैं|

जल प्रदूषण के प्रभाव- जल प्रदूषण के विभिन्न कारकों से न सिर्फ तालाबों एवं नदियों का जल प्रदूषित होता है, बल्कि भूमिगत जल भी प्रदूषित हो रहा है| प्रदूषित जल से जलीय जीवों का जीवन तो प्रभावित होता ही है, साथ-ही-साथ इसके सेवन से मनुष्य में अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा होती है| जल प्रदूषण के कुछ मुख्य प्रभाव निम्नलिखित है–

1. भारी धातुओं; जैसे- आर्सेनिक, शीशा, पारा आदि विषैले होते है| जल में पारा होने से यह खाद्य श्रृंखला में पहुँचकर मनुष्य में मिनेमेटा रोग फैलाता है जिससे मनुष्य का तंत्रिका तंत्र (Nervous system) प्रभावित होता है| मनुष्य पागल हो जाता है, देखने की शक्ति कम हो जाती है|

2. औद्योगिक बहिश्राव में लोहा, फिनोल क्लोरीन, अपमार्जक, हाइड्रोकार्बन, तेल मैंगनीज आदि पदार्थ रहते है| इससे पानी का स्वाद खराब हो जाता है|

3. घरेलु अपमार्जक, साबुन, क्षार आदि व्दारा पानी में झाग उत्पन्न होता है| इससे जल की गुणवत्ता में ह्रास होता है|

4. प्रदूषित जल से स्नान करने से एलर्जी, त्वचा रोग, आँखों में संक्रमण आदि होता है|

5. जल में वाहित मलजल कार्बनिक यौगिकों आदि के मिलने से BOD का मान काफी बढ़ जाता है एवं विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं तथा कवकों की संख्या में वृध्दि होती है| इससे उदर रोग, पेचिश, पीलिया, हैजा, अपाचन जैसे रोग उत्पन्न होते है|

प्रदूषित जल का उपचार एवं एकीकृत अपशिष्ट जल उपचार- प्रदूषित जल का उपचार करने के बाद ही इसे जलाशयों में प्रवाहित किया जाना चाहिए| इस उपचार के निम्नांकित तीन चरण होते है–

1. प्राथमिक उपचार (Primary Treatment)- इस उपचार में प्रदूषित a| में उपस्थित बड़े कणों को कुछ भौतिक क्रियाओं जैसे- अवसादन (Sedimentation), प्लवन (Floatation), छानन (Screening) आदि के व्दारा अलग कर लिया जाता है|

2. व्दितीयक उपचार (Secondary Treatment)- इस चरण में सूक्ष्मजीवों का उपयोग कर कार्बनिक प्रदूषकों का अपघटन करवाया जाता है| जीवाणु कार्बनिक पदार्थों का अपघटन करते हैं एवं शैवाल इस क्रिया के दौरान मुक्त होने वाली CO_2 को प्रकाश संश्लेषण में उपयोग कर ऑक्सीजन मुक्त करते हैं जिससे जीवाणु अपनी वृध्दि कायम रख पाते है| इसके बाद क्लोरीन का उपयोग किया जाता है जिससे हर प्रकार के जीवाणु नष्ट हो जाते है|

व्दितीयक उपचार से कार्बनिक पदार्थों, जीवाणुओं आदि का नाश तो हो जाता है, लेकिन अकार्बनिक फॉस्फेट, नाइट्रेट आदि अभी भी मौजूद रहते है जिसके चलते यह जल पीने योग्य नही रहता है| इस चरण में घुलित लवणों को रासायनिक विधियों से दूर किया जाता है; जैसे- रिवर्स परासरण (Reverse Osmosis), आक्सीकरण (Oxydation) आदि| उपचारित जल को या तो जलाशयों में बहा दिया जाता है या पीने के काम में लाया जाता है|

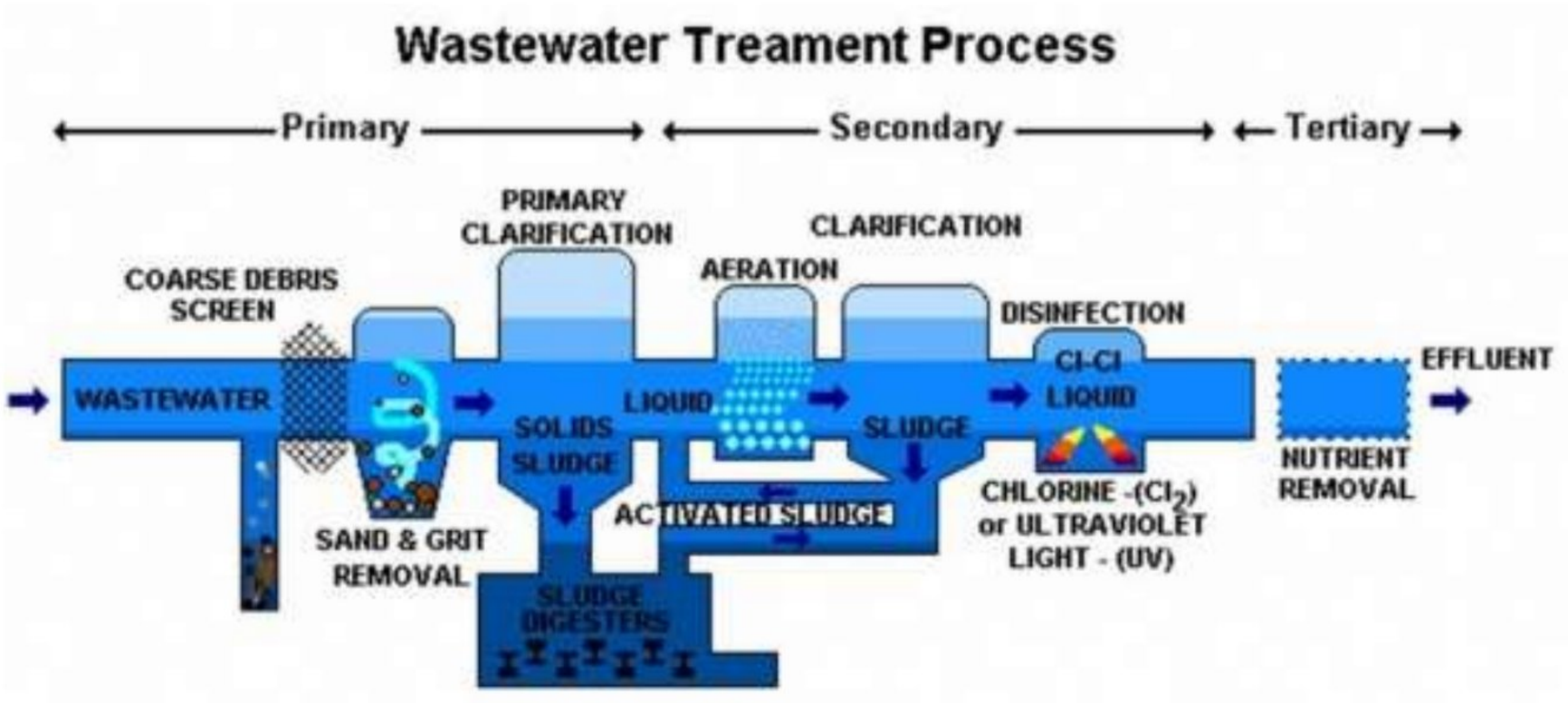

*गंगा नदी में बढ़ते हुए प्रदूषण को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने सन 1985 में 250 करोड़ रुपये की गंगा परियोजना की शुरुआत की|

जैव रासायनिक ऑक्सीजन माँग (Biochemical oxygen demand=BOD)- अपघटकों को जल में उपस्थित कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों का अपघटन करने के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है| यदि जल में कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों की अधिकता होती है तो उनके विघटन की दर व ऑक्सीजन की खपत बढ़ जाती है. जिससे जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है| ऑक्सीजन की आवश्यकता का सीधा सम्बन्ध जल में कार्बनिक पदार्थों की बढती मात्रा से है| इसे जैव-रासायनिक ऑक्सीजन माँग (BOD) के रूप में प्रदर्शित किया जाता है| BOD, ऑक्सीजन की उस मात्रा का मापन है जो जल के एक नमूने में वायवीय जैविक अपघटकों व्दारा जैव क्षयकारी कार्बनिक पदार्थों के अपघटन के लिए आवश्यक है|

सुपोषण (Eutrophication)- जलाशयों में अपशिष्ट जल के आने से तथा कार्बनिक अपशिष्टों के अपघटन से पोषकों की मात्रा बढती है| जल में पोषकों की अधिक प्राप्ति से जलीय पौधों एवं शैवालों (विशेष रूप से नील-हरी शैवालों) की वृध्दि तीव्रता से होती है| नील-हरी शैवालों की अत्यधिक वृध्दि ऐअवं समूहन से शैवाल उफान (algal bloom) का निर्माण होता है| ये शैवाल जल की सतह को पूर्णतया ढक लेते है और प्रायः जल में आविष (Toxin) भी मुक्त करते है जिससे कभी-कभी जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है| ऑक्सीजन की कमी कारण तथा आविषों के प्रभाव से मछलियाँ तथा अन्य जन्तु मरने लगते हैं| इस सम्पूर्ण घटनाक्रम को ही सुपोषण कहते हैं|

जल प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय- निम्न उपायों को अपनाकर जल प्रदूषण को कम किया जा सकता है–

1. अपमार्जकों में ऐल्किल बेन्जीन सल्फोनेट के स्थान पर लीनियर ऐल्किल सल्फोनेट का प्रयोग किया जाना चाहिए जिसका निम्नीकरण हो सकता है|

2. कार्बनिक पदार्थों की मात्रा को कम करने के लिए सेप्टिक टैंक (Septic tank), ऑक्सीकरण ताल (Oxidation Pond) तथा फ़िल्टर स्तर का प्रयोग करना चाहिए|

3. घरों से निकलने वाले मलिन जल को एकत्रित करके संशोधन संयत्रों में पूर्ण उपचार के उपरान्त ही नदी या तालाब में विसर्जित किया जाना चाहिए|

4. कुछ मछलियाँ हानिकारक जन्तुओं के लार्वा तथा अण्डों को खाकर उनकी संख्या को कम करती हैं| इसलिए इन्हें जल स्रोतों में पालना चाहिए; जैसे- **गैम्बुशिया** मछली मच्छर के अण्डों व लार्वा का भक्षण करती है|

5. रासायनिक खाद एवं पीड़कनाशी का जरुरत से ज्यादा उपयोग नही किया जाना चाहिए| इनके स्थान पर निम्नीकरणीय पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए|

6. पौधों; जैसे- जलकुम्भी (water hyacinth) को विकसित होने देना चाहिए, जो शीशा, कैडमियम, पारा, निकिल आदि भरी धातुओं को अपने में अवशोषित कर लेते हैं|

7. शवों को नदियों में प्रवाहित नही किया जाना चाहिए| विद्युत शवदाहगृह (electric crematorium) के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए|

8. प्रदूषण-सम्बन्धी नियमों का कड़ाई एवं ईमानदारी से अनुपालन होना चाहिए|

कृषि रसायन एवं उनके प्रभाव- हरित क्रान्ति के आने से फसल उत्पादन बढाने के लिए अजैव (inorganic) उर्वरकों (fertilizers) और पीड़कनाशियों का प्रयोग कई गुना बढ़ गया है और अब शाकनाशी, कवकनाशी (Fungicides) आदि का प्रयोग काफी होने लगा है| ये न केवल मृदा की रासायनिक गुणवत्ता को प्राभिव्त करते हैं बल्कि मृदा में रहने वाले जीवों, मृदा जल एवं सतह जल को भी प्राभित करते हैं| कृषि उपज को बढ़ाने के लिए आज अनेक प्रकार के कीटनाशी (pesticide), खरपतवारनाशी (weedicides) व अन्य क्लोरीनयुक्त पदार्थों का प्रयोग किया जा रहा है| कीटनाशी सामान्यतः विस्तृत स्पेक्ट्रम के होते है, जो अधिकतर कीटों का नाश करते है| DDT, BHC आदि क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन्स हैं| DDT के उपयोग पर पाबन्दी लगा दी गयी फिर भी इसका प्रयोग मलेरिया नियंत्रण में किया जा रहा है|

लगभग अधिकांश कीटनाशी, खरपतवारनाशी एवं क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन्स लम्बे समय तक मृदा एवं जल में बने रहते हैं| इनका जीवधारियों व्दारा बहुत कम विघटन होता है अर्थात ये अक्षयकारी होते हैं| ये पदार्थ खाद्य श्रृंखला के व्दारा पौधों व जन्तुओं के शरीर में जाते हैं और वहीँ पर संचित होते रहते हैं| इनकी सान्द्रता प्रत्येक ट्रोफिक स्तर पर बढती जाती है और उच्च उपभोक्ता में अधिकतम हो जाती है| इस क्रिया को **जैविक आवर्धन (Biological Magnification)** कहते है| DDT तथा BHC और कीटनाशक पदार्थ वसा में घुलनशील होते हैं; अतः ये मनुष्यों व जन्तुओं के वसोतक में संचित हो जाते हैं| श्वसन क्रिया में वसा के आक्सीकरण के समय ये पदार्थ रूधिर वाहिनियों में प्रवेश करके विषैला प्रभाव दिखाते हैं और इससे कैंसर तक हो जाता है|

उर्वरक (Fertilizers)- ये सान्द्रित रसायन हैं जिनका प्रयोग फसल की उपज बढाने के लिए किया जाता है| किन्तु इनके अत्यधिक एवं बार-बार प्रयोग से मृदीय सूक्ष्मजीवों की संख्या में कमी होने लगती है, मृदा की लवणता बढ़ जाती है, तथा यह जल के साथ जलाशयों में पहुँचकर जल के सुपोषण का कारण बनते है|

ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन- ठोस अपशिष्ट में वे सभी चीजें सम्मिलित हैं जो कूड़े-कचरे में फेंक दी जाती है| नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट में घरों, कार्यालयों, भंडारों, विद्यालयों आदि से रद्दी में फेंकी गई सभी चीजें आती है जो नगरपालिका व्दारा इकठ्ठा की जाती है और उनका निपटान किया जाता है|

ठोस अपशिष्टों का वर्गीकरण- मानव की विभिन्न गतिविधियों से निष्कासित होने वाले ठोस अपशिष्टों को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है–

1. जैव-निम्नीकरणीय अपशिष्ट 2. जैव-अनिम्नीकरणीय अपशिष्ट 3. पुनश्चक्रणीय अपशिष्ट|

1. जैव-निम्नीकरणीय अपशिष्ट- वे अपशिष्ट या अवांछित पदार्थ, जिनका जैविक निम्नीकरण या अपघटन होता हो, जैव-निम्नीकरणीय अपशिष्ट कहलाते हैं| इस वर्ग के अपशिष्टों का अपघटन मुख्यतः जीवाणुओं व्दारा होता है| जन्तुओं के मॉल-मूत्र, वाहित मॉल, कृषि व्दारा उत्पन्न अपशिष्ट, पेड़-पौधों के मृत शरीर, कागज, कपास से निर्मित कपड़े आदि इसके उदाहरण हैं|

2. जैव-अनिम्नीकरणीय अपशिष्ट- वे अपशिष्ट पदार्थ जिनका जैविक अपघटन नही हो पाटा है तथा जो अपने स्वरूप को हमेशा बनाए रखते हैं अर्थात प्राकृतिक विधियों व्दारा नष्ट नही हो पाते हैं, जैव अनिम्नीकरणीय अपशिष्ट कहलाते हैं| विभिन्न प्रकार के रसायनों; जैसे- पीडकनाशी, DDT, शीशा, आर्सेनिक, एलुमिनियम, रेडिओधर्मी पदार्थ आदि इसके उदाहरण हैं|

3. पुनश्चक्रणीय अपशिष्ट- वे अपशिष्ट, जिनको पुनश्चक्रण व्दारा पुनः उपयोग किया जा सके, पुनश्चक्रणीय अपशिष्ट कहलाते है|

अपशिष्टों के निपटारे का प्रबन्धन- साधारणतः अपशिष्टों को एक जगह एकत्रित करके जला दिया जाता है| किन्तु इनको जलाने से अपशिष्ट के आयतन में कमी a जाती है लेकिन यह सामान्यतः पूरी तरह जलता नही है और खुले में इसे फेंकने से यह चूहों और मक्खियों के लिए प्रजनन स्थल का कार्य करता है| अपशिष्टों को जलाने के बदले में सैनिटरी लैंडफिल्स अपनाया गया| सैनिटरी लैंडफिल्स में अपशिष्ट को संवहन (Compaction) के बाद गड्ढा या खाई में डाला जाता है| वास्तव में लैंडफिल्स भी कोई अच्छा हल नही है| इन लैंडफिल्स से रसायनों के भी रिसाव का खतरा रहता है जिससे कि भौम जल संसाधन प्रदूषित हो जाते हैं| इन सभी का एक मात्र हल है कि पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति हम सभी को अधिक संवेदनशील होना चाहिए|

प्लास्टिक अपशिष्टों का निपटारा- प्लास्टिक अपशिष्टों के निपटारे की एक कारगर विधि लगभग 8 साल पहले बंगलुरु में प्लास्टिक बोरियों के उत्पादनकर्ता अहमद खान व्दारा खोजी गई| मो० खान ने पुनश्चक्रित प्लास्टिक का पॉलीब्लेंड नामक महीन पाउडर तैयार किया| इस पाउडर का उपयोग सड़क बनाने में बिटुमिन के साथ मिलाकर किया गया| बिटुमिन तथा पॉलीब्लेंड के मिश्रण से निर्मित सड़क का जल-विकर्षण गुण अर्थात जल से बचे रहने की क्षमता बढ़ गई| इसके फलस्वरूप सड़क की उम्र तीन गुनी बढ़ गई|

अस्पताल के अपशिष्टों का निपटारा- अस्पतालों से अनेक तरह के अपशिष्ट; जैसे- डिस्पोजबल इंजेक्शन, संक्रमित रुई, प्लास्टर ऑफ़ पेरिस, संक्रमित पट्टियाँ, रक्त तथा मानव शरीर के कटे हिस्से, खाली बोतलें, विभिन्न दवाईयाँ आदि प्रतिदिन निकलते हैं, जिन्हें जहाँ-तहाँ फेंक दिया जाता है| इसके साथ-साथ अनेक हानिकारक सूक्ष्मजीव भी इन अपशिष्टों के साथ वायुमंडल में फ़ैल जाते हैं जो मानव एवं अन्य जानवरों के लिए रोग का कारण बनते है| अतः इन अपशिष्टों का समुचित निपटारा करना आवश्यक है| इन अपशिष्टों को एकत्रित का भस्मक (incinerator) व्दारा अत्यधिक तापमान पर जला दिया जाना चाहिए|

इलेक्ट्रोनिक अपशिष्टों का निपटारा- अनुपयोगी एवं खराब इलेक्ट्रॉनिक सामानों को इलेक्ट्रोनिक अपशिष्ट या ई-वेस्टेज कहते है| उदाहरण- ख़राब टेलीविज़न, कम्प्यूटर, रेडिओ मोबाइल फ़ोन आदि

इलेक्ट्रोनिक अपशिष्टों को या तो जमीन में गाड़ दिया जाना चाहिए या जलाकर नष्ट कर दिया जाना चाहिए| इनमे मौजूद वे तत्व या धातु जिनका पुनश्चक्रण किया जा सकता हो; जैसे- लोहा, निकिल, तांबा आदि का पुनश्चक्रण कर पुनः उपयोग किया जाना चाहिए|

रेडिओधर्मी प्रदूषण– रेडिओएक्टिव तत्वों का उत्सर्जन जो जैव समुदाय को नुक्सान पंहुचाता है रेडिओधर्मी प्रदूषण कहलाता है| रेडिओधर्मी पदार्थों के परमाणु केंद्र के टूटने से एल्फा, बीटा तथा गामा किरणें उत्सर्जित होती है| वातावरण में रेडिओधर्मी प्रदूषण निम्नलिखित स्रोतों से पंहुचता है–

1. प्राकृतिक स्रोत- प्राकृतिक विकिरण में अन्तरिक्ष किरणें अन्तरिक्ष से एवं रेडिओन्युक्लीड्स से स्थलीय विकिरणें पृथ्वी पर आती हैं| बहुत से रेडिओन्युक्लीड्स; जैसे- यूरेनियम-235, रेडियम-224, थोरियम-232, पोटैशियम-40, यूरेनियम-238, रेडान-222, कार्बन-14 आदि चट्टानों, मिट्टी तथा जल में प्राकृतिक रूप में पाए जाते है|

2. मानव-निर्मित स्रोत- विकिरण प्रदूषण के मानव-निर्मित स्रोत भी होते है; जैसे- प्लूटोनियम एवं थोरियम का खनन एवं शुध्दिकरण, नाभिकीय शस्त्रों का उत्पादन एवं प्रयोग, न्युक्लीय ऊर्जाघर एवं ईधन, रेडिओधर्मी आइसोटोप का निर्माण आदि| मानव निर्मित स्रोतों में निम्नलिखित मुख्य हैं–

(i). नाभिकीय शस्त्र- नाभिकीय शस्त्रों के प्रयोग से वातावरण में रेडिओधर्मी पदार्थ बहुत दूर-दूर तक प्रसारित हो जाते हैं एवं इनका प्रभाव अनेक वर्षों तक रहता है| जापान में सबसे पहले परमाणु-बम का विस्फोट नागासाकी में तथा उसके बाद दूसरा हिरोशिमा में सन 1945 में हुआ था जिससे बहुत से बेक़सूर लोग, जन्तु तथा पेड़-पौधे मर गए थे| लगभग सत्तर वर्ष से अधिक बीत जाने के बाद आज भी उसके दुष्प्रभाव का अनुभव किया जा रहा है|

(ii). नाभिकीय रिएक्टर एवं नाभिकीय ईंधन- नाभिकीय पावर संयन्त्र में नाभिकीय ईंधन का डालना, विखंडन, क्रियाशीलता एवं तापीय प्रक्रियाएँ होती है| रिऐक्टर को ठण्डा करने के लिए प्रयुक्त होने वाले प्रशीतक एवं ईंधन दोनों ही विकिरण पैदा करते हैं| सबसे बड़ी परेशानी इन संयन्त्रों से निकले या बचे हुए रेडिओएक्टिव अपशिष्टों के निपटारे में होती है| यह अपशिष्ट जहाँ भी फेंका जाता है, वहाँ लोगो के स्वाश्थ्य पर इसका बहुत बुरा असर पड़ता है|

रेडिओधर्मी प्रदूषण के प्रभाव- प्रमुख प्रभाव निम्नवत हैं–

1. विभिन्न प्रकार के रेडिओधर्मी पदार्थ खाद्य श्रृंखला के व्दरार स्थलीय एवं जलीय जीव-जन्तुओं में पंहुचता हैं जिनसे या जिनके विभिन्न उत्पादों से ये मनुष्य के शरीर में पंहुचकर अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा करते हैं| विकिरण की कम मात्रा से शरीर के अंग तथा उनके कार्य को बहुत हानि होती है, लेकिन इसकी उच्च मात्रा से मनुष्य की तुरन्त मृत्यु हो जाती है|

2. अधिक समय तक अथवा बार-बार रेडिओधर्मी पदार्थों के विकिरण से रक्त-कैंसर अथवा ल्यूकीमिया हो सकता है|

3. विकिरण से जीवों में उत्परिवर्तन के दर में वृध्दि होती है| जीवों के जीन एवं गुणसूत्रों के लक्षणों में परिवर्तन हो जाता है जिससे हड्डी का टी०बी० तथा कैंसर, शरीर में विकृति तथा अंगों के विकास में असामान्यताएँ आदि परिलक्षित होती है|

4. पराबैगनी विकिरणों में अधिक समय तक रहने के कारण त्वचा सम्बन्धी रोग होता है|

5. रेडिओधर्मी विकिरणों से बंध्यता, दृष्टिदोष, फेफड़ों का ट्यूमर, ऊतकों का ह्रास आदि होता है|

रेडिओअपशिष्ट प्रबन्धन- रेडिओएक्टिव अपशिष्टों को नष्ट करने के लिए सबसे सरल एवं उचित उपाय यह है कि, इस अपशिष्ट को भूमि में लगभग 500 मीटर या और अधिक गहराई में गाड़ दिया जाए परन्तु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वह स्थान जहाँ पर अपशिष्ट को गाड़ा जा रहा हो मानव आबादी से बहुत दूर हो|

ग्रीनहाउस प्रभाव एवं वैश्विक तपन (Greenhouse Effect and Global Warming)–

ग्रीनहाउस प्रभाव (Greenhouse Effect)- सूर्य की ऊष्मा से गर्म होने के बाद जब पृथ्वी ठण्डी होने लगती है, तब ऊष्मा पृथ्वी से बाहर विसरित होती है लेकिन कार्बन डाइऑक्साइड एवं क्लोरोफ्लोरो कार्बन, नाइट्रिक ऑक्साइड एवं मीथेन आदि अन्य ऊष्मारोधी गैसें इस ऊष्मा का कुछ भाग अवशोषित कर लेती हैं एवं शेष बची ऊष्मा को पुनः धरातल को वापस कर देती हैं| इस प्रक्रिया में वायुमण्डल के निचले भाग में अतिरिक्त ऊष्मा एकत्र हो जाती है| विगत कुछ वर्षों में इन ऊष्मारोधी गैसों की मात्रा वायुमण्डल में बढ़ जाने के कारण वायुमण्डल के औसत ताप में वृध्दि हो गयी है, इसे ही ''ग्रीनहाउस प्रभाव'' कहा गया है| प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया ग्रीनहाउस प्रभाव को कम करती है, जबकि वनों का विनाश होने से CO_2 की मात्रा वायुमण्डल में बढ़ रही है|

ग्रीनहाउस प्रभाव के कारण- ग्रीनहाउस प्रभाव का मुख्य कारण कार्बनडाइऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन आदि गैसें है| इन्हें अब ''ग्रीनहाउस गैसें'' भी कहा जाने लगा है| ग्रीनहाउस गैसें वे गैसें हैं जो लघु तरंगदैर्ध्य की

विकिरणों को जाने देती हैं किन्तु दीर्घ तरनदैर्ध्य की विकिरणों को अवशोषित करती हैं| सूर्य से आने वाली किरणें लघु तरंग वाली होती हैं, जबकि पृथ्वी से टकराकर वापस वायुमण्डल में लौटते समय ये दीर्घ तरंग विकिरणों में परिवर्तित हो जाती हैं अतः ये तरंगें ग्रीनहाउस गैसों व्दारा अवशोषित कर ली जाती हैं जिससे वायुमण्डल का तापमान बढ़ जाता है|

CO_2 सर्वाधिक मात्रा में पायी जाने वाली ग्रीनहाउस गैस है जो कुल भूमंडलीय ऊष्मा का 60% भाग प्रदान करती है| ग्रीनहाउस प्रभाव में मीथेन का लगभग 20% योगदान है| CFC का ग्रीनहाउस प्रभाव में लगभग 14% योगदान है| N_2O का ग्रीनहाउस प्रभाव में लगभग 6% का योगदान है|

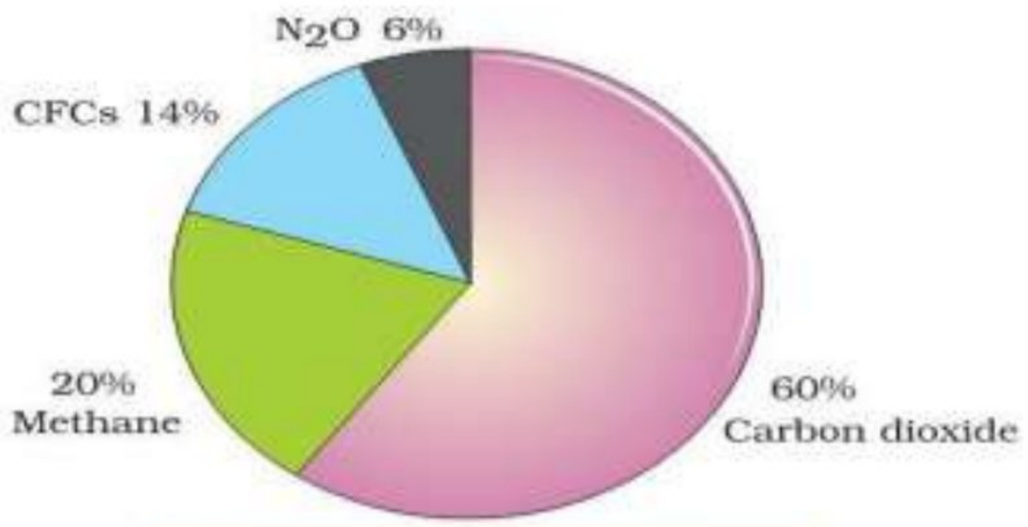

Relative contribution of various greenhouse gases to total global warming

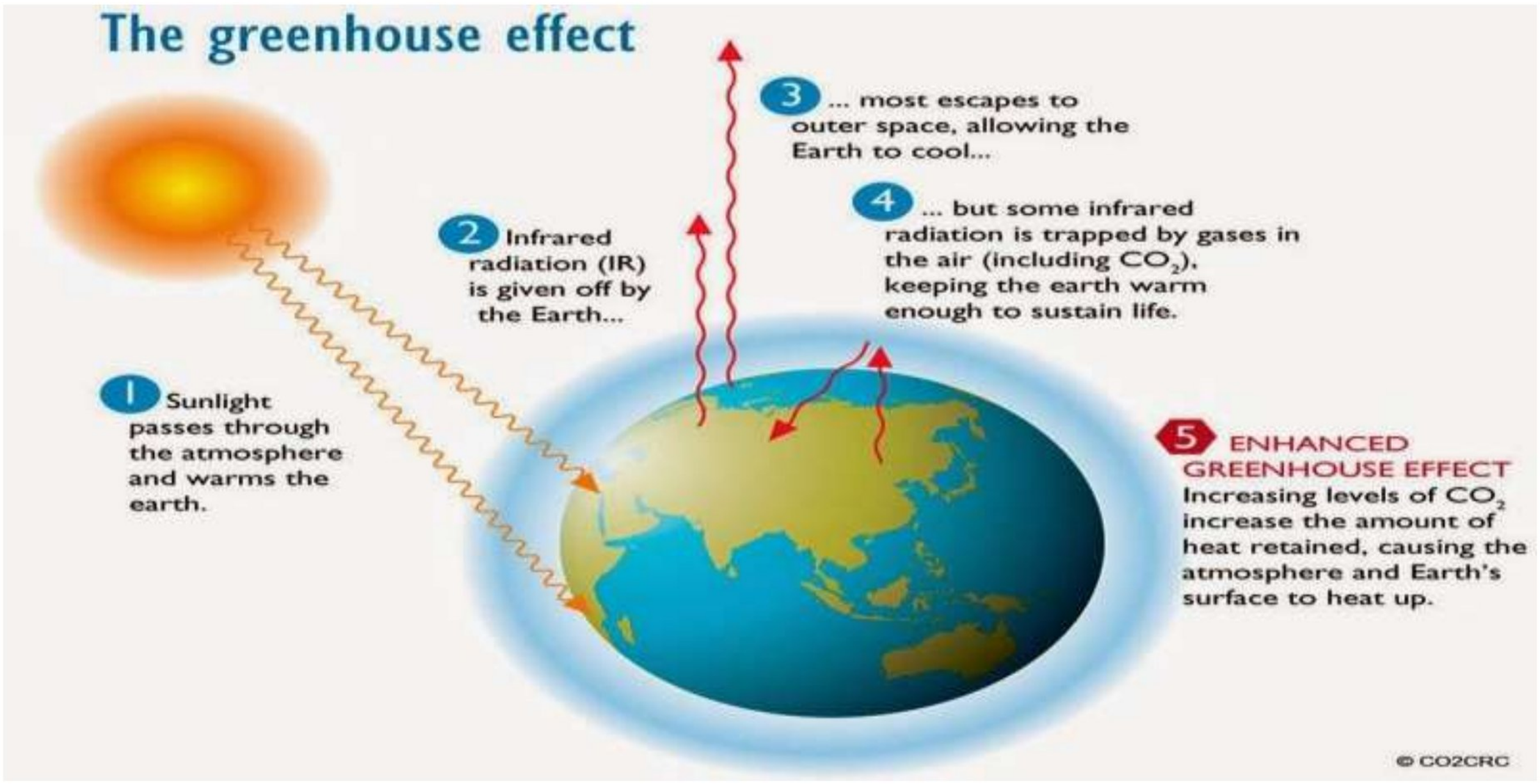

वैश्विक तपन (Global Warming)- ग्रीनहाउस प्रभाव के कारण अब तक वायुमंडल में लगभग 36 लाख टन कार्बन डाइऑक्साइड की वृध्दि हो चुकी है एवं वायुमण्डल से 24 लाख टन ऑक्सीजन समाप्त हो चुकी ह ए| वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृध्दि के कारण विगत पचास वर्षों में पृथ्वी के औसत तापक्रम में 1°C की वृध्दि हो चुकी है| अनुमान है कि ग्रीनहाउस प्रभाव की यही स्थिति रही तो सन 2050 तक पृथ्वी के तापमान में लगभग 4°C तक वृध्दि हो जायेगी| ध्रुवीय क्षेत्रों में यह वृध्दि 9 °C तक हो सकती है किन्तु यदि पृथ्वी के तापमान में मात्र 3.6 °C तक की वृध्दि हो जाये तो आर्कटिक एवं अंटार्कटिका के विशाल हिमखण्ड पिघल जाएंगे, जिससे समुद्र के जल स्तर में 10 इंच से 5 फुट तक की वृध्दि हो सकती है

जिसका परिणाम यह होगा कि प्रायः सभी समुद्र तटीय नगर समुद्र में डूब जाएंगे| ग्रीनहाउस प्रभाव से पृथ्वी के तापमान में अत्यधिक वृध्दि से मौसम में भयंकर बदलाव आएगा| सूर्य की किरणे कैंसर जैसे भयानक रोग को जन्म देंगी| कहीं सूखा पड़ेगा, कहीं गर्म हवाएँ चलेगी, कहीं भीषण तूफ़ान एवं कहीं बाढ़ आयेगा|

ग्रीनहाउस तथा ग्लोबल वार्मिंग को कम करने के उपाय-

1. जीवाश्मीय ईंधनों का कम से कम प्रयोग|

2. हाइड्रोजन ईंधन का अतिशीघ्र प्रयोग|

3. वृक्षारोपण पर विशेष जोर दिया जाना चाहिए|

4. वनोन्मूलन (Deforestation) को कम किया जाना चाहिए|

5. ग्रीनहाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैसों को अन्य रसायनों से प्रतिस्थापित करना|

ओजोन अवक्षय (Ozone Depletion)- ओजोन (O_3) गैस ऑक्सीजन (O_2) गैस की ही एक अवस्था होती है जिसमें एक ऑक्सीजन परमाणु की अधिकता होती है| ओजोन गैस **समतापमण्डल (Stratosphere)** में एक परत की तरह (लगभग 16km से 50km ऊँचाई वाले क्षेत्र) पाई जाती है| यह परत सूर्य से निकलने वाले पराबैगनी विकिरण को अवशोषित करने वाले कवच का काम करती है| पराबैगनी किरणें सजीवों के लिए बेहद हानिकारक हैं| वायुमण्डल के निचले भाग से लेकर शिखर तक के वायु स्तम्भ में ओजोन की मोटाई **डॉबसन यूनिट (DU)** में पायी जाती है|

आण्विक ऑक्सीजन पर पराबैगनी किरणों की क्रिया के फलस्वरूप ओजोन गैस सतत बनती रहती है और समतापमण्डल में इसका आण्विक ऑक्सीजन में निम्नीकरण भी होता रहता है| समतापमण्डल में ओजोन के उत्पादन और अवक्षय निम्नीकरण में सन्तुलन होना चाहिए| हाल में, क्लोरोफ्लोरोकार्बन के व्दारा ओजोन निम्नीकरण बढ़ जाने से इसका सन्तुलन बिगड़ गया है| वायुमण्डल के निचले भाग में उत्सर्जित CFCs ऊपर की ओर उठता है और यह समतापमण्डल में पंहुचता है| समतापमण्डल में पराबैगनी किरणें उस पर कार्य करती हैं जिसके कारण Cl (क्लोरिन) परमाणु का मोचन होता है| क्लोरीन परमाणु के कारण ओजोन का निम्नीकरण होता है जिसके कारण आण्विक ऑक्सीजन का मोचन होता है| इस अभिक्रिया में क्लोरीन परमाणु का उपभोग नही होता है; क्योंकि यह सिर्फ उत्प्रेरक का कार्य करता है| CFCs के क्लोरीन परमाणु का मोचन हो जाता है| CFCs से अलग हुआ क्लोरीन का एक परमाणु ओजोन के 100,000 अणुओं को नष्ट कर देता है|

$$O2 \xrightarrow{UV} [O] + [O]$$

$$O2 + O \longrightarrow O3$$

$$Cl + O3 \longrightarrow ClO + O2$$

$$ClO + O \longrightarrow Cl + O2$$

$$O3 \xleftrightarrow{UV} O2 + [O]$$

यद्यपि समतापमण्डल में ओजोन का अवक्षय विस्तृत रूप से होता रहता है लेकिन यह अवक्षय अन्टार्कटिका क्षेत्र में विशेष रूप से अधिक होता है| इसके फलस्वरूप यहाँ काफी बड़े क्षेत्र में ओजोन की परत काफी पतली हो गई है जिसे सामान्यतः **ओजोन छिद्र (Ozone Hole)** कहा जाता है|

ओजोन अवक्षय के हानिकारक प्रभाव को देखते हुए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अग्रलिखित कदम उठाए गए हैं–

1. यूनाइटेड नेशन्स पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environmental Programme=UNEP) - स्टॉकहोम, स्वीडन में सन 1972 में यूनाइटेड नेशन्स व्दारा मानव पर्यावरण का आयोजन किया गया जिसे UNEP कहा गया| UNEP ने पर्यावरण समस्याओं के अध्ययन एवं निवारण हेतु सन 1983 में एक आयोग विश्व पर्यावरण एवं विकास का गठन किया|

2. वियना सभा (Viena Convention)- यह 1985 में सम्पन्न हुआ| इसमें ओजोन स्तर की सुरक्षा पर विशेष जोर दिया गया|

3. मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल (Montreal Protocol)- 16 सितम्बर, सन 1987 को 27 औद्योगिक देशों ने मॉण्ट्रियल (कनाडा) में एक अंतर्राष्ट्रीय सन्धि पर हस्ताक्षर किए जिसे मॉण्ट्रियल प्रोटोकॉल कहा जाता है| यह सन्धि 1989 से प्रभावी हुई| ओजोन अवक्षयकारी पदार्थों के उत्सर्जन पर नियन्त्रण के लिए बाद में और अधिक प्रयास किये गए तथा प्रोटोकॉल विकसित किये गए और विकासशील देशों के लिए अलग-अलग निश्चित दिशा-निर्देश जोड़े गए जिससे कि CFC और अन्य ओजोन अवक्षयकारी रसायनों के उत्सर्जनों को कम किया जाए|

4. पृथ्वी शिखर सम्मलेन (Earth Summit)- इसे यूनाइटेड नेशन्स का पर्यावरण एवं विकास सम्मलेन (United Nations Conference on Environment and Developement= UNCED) कहा गया जो **रियोडिजेनेरियो**, ब्राज़ील में सन 1992 में सम्पन्न हुआ था| इस पर 154 देशों ने हस्ताक्षर करके यह सहमती बनाई थी कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का स्तर 1990 के स्तर तक ही बनाये रखा जाये|

5. क्योटो प्रोटोकॉल (Kyoto Protocol)- क्योटो, जापान में दिसम्बर, 1997 में विभिन्न राष्ट्रों से यह वायदा कर लिया गया कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को 1990 के स्तर से 5% तक कम स्तर (2008-2012) तक लाये|

वनोन्मूलन (Deforestation)- वन क्षेत्रों में उपस्थित विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों को काटकर वन-रहित क्षेत्रों में रूपान्तरण करना वनोन्मूलन कहलाता है| भारत के कुल क्षेत्रफल के लगभग 30 प्रतिशत भान में वन थे| सदी के अंत तक यह घटकर 19.4% रह गया| भारत की राष्ट्रीय वन नीति (1988) में सिफारिश की गई है कि मैदानी इलाकों में 33 प्रतिशत वन क्षेत्र होने चाहिए और पर्वतीय क्षेत्रों में 67 प्रतिशत वन क्षेत्र होने चाहिए|

वृक्ष, इमारती लकड़ी, काष्ठ ईंधन, पशु फॉर्म और अन्य कई उद्देश्य के लिए काटे जाते हैं| काटो और जलाओ कृषि जिसे आमतौर पर भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों में **झूम खेती (Jhum Cultivation)** या स्थानान्तरण कृषि कहा जाता है, के कारण भी वनोन्मूलन हो रहा है| काटो एवं जलाओ कृषि में कृषक जंगल के वृक्षों को काट देते हैं और पादप-अवशेष को जला देते हैं| राख का प्रयोग उर्वरक के रूप में तथा उस भूमि का प्रयोग खेती के लिए या पशु चारागाह के रूप में किया जाता है| खेती के बाद उस भूमि को कई वर्षों तक वैसे ही खाली छोड़ दिया जाता है ताकि पुनः उर्वर हो जाये| कृषक फिर अन्य क्षेत्रों में जाकर इसी प्रक्रिया को दोहराते हैं|

प्रभाव- वनों के विनाश से ग्रीनहाउस प्रभाव को बढ़ावा मिलता है तथा इमारती लकड़ी की कमी, जलवायु परिवर्तन, तूफ़ान, सूखा, सिल्टेसन (Siltation), ग्लोबल वार्मिंग, वन्य जीवों का विलुप्त होना, आदिवासियों की संस्कृति नष्ट होना, विविधता की घटना, जलचक्र का बिगड़ना, मृदा अपरदन, मरुस्थलीकरण आदि प्रभाव वनोन्मूलन से पड़ते हैं|

अम्ल वर्षा (Acid rain)- विभिन्न औद्योगिक संस्थानों की चिमनियों, स्वचालित वाहनों एवं विभिन्न प्रकार के ईधन पदार्थों के जलने से कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) तथा सल्फर व नाइट्रोजन के ऑक्साइड (SO_2 and NO_x) वायुमण्डल में मुक्त हो रहे हैं| ये गैसें कुछ दिन पश्चात वायुमण्डल में उपस्थित जल के साथ क्रिया करके सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) एवं नाइट्रिक अम्ल (HNO_3) बनाती है| सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2) तथा कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) जल से अभिक्रिया करके सल्फ्यूरस अम्ल (H_2SO_3) तथा कार्बोनिक अम्ल (H_2CO_3) बनाती है| इसके अतिरिक्त नाइट्रोजन के ऑक्साइड जल से क्रिया करके नाइट्रस

अम्ल (HNO_2) भी बनाते है| ये सभी अम्ल वर्षा के जल के साथ मिलकर अम्ल वर्षा के रूप में पृथ्वी पर बरसने लगते हैं| अम्ल वर्षा फसलों, पौधों, जन्तुओं व भवनों के लिए हानिकारक होती है|

सामान्य वर्षा का pH मान 5.6 से 6.0 के बीच होता है, जबकि अम्ल वर्षा का pH मान 3.0 से 4.5 के मध्य होता है|

पर्यावरणीय समस्याओं से सम्बन्धित तीन केस–

केस स्टडी-1- ताजमहल पर प्रभाव- चूना पत्थर ($CaCO_3$) तथा संगमरमर से बनी इमारतों को अम्ल वर्षा से अधिक नुकसान पंहुचता है| मथुरा स्थित तेल परिशोधक कारखाने एवं कुछ अन्य औद्योगिक संस्थानों में प्रयुक्त कियी जाने वाले ईधन से उत्पन्न धुएँ में SO_2 की मात्रा अधिक रहती है| यह SO_2 वर्षा के जल के साथ अभिक्रिया करके 'सल्फ्यूरिक अम्ल' बनाती है, जोकि अम्ल वर्षा के रूप में बरसता है तथा संगमरमर जैसे पत्थरों को प्रभावित करता है| ताजमहल के निकट स्थित इन औद्योगिक संस्थानों के कारण ताजमहल पर हानिकारक प्रभाव पड़ रहा है| इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ऐसे औद्योगिक संस्थानों को, जिनसे निकली SO_2 आदि गैसें, जो ताजमहल को प्रभावित करती हैं बन्द करवा दिया है|

केस स्टडी-2- भोपाल गैस त्रासदी (Bhopal Gas Tragedy)- 3 दिसम्बर, 1984 की मध्यरात्री में भोपाल स्थित यूनियन कार्बाइड कम्पनी के कारखाने के एक संयन्त्र से दुर्घटनावश निकली गैसों के कारण अनेक लोगों की सोते हुए अकारण ही मृत्यु हो गयी तथा बहुत से लोग कई अन्य असाध्य बीमारियों के शिकार हो गए| यह घटना ''भोपाल गैस त्रासदी' (Bhopal gas tragedy) के नाम से जानी जाती है| इस कारखाने में **मिथाइल आइसो सायनेट (M.I.C)** जैसी विषैली गैस (जिसका उपयोग सीवान नामक कीटनाशक उत्पाद बनाने में किया जाता था) के रिसाव से लगभग 2 हजार व्यक्तियों की जानें गईं तथा हजारों लोग आँख और श्वास के गम्भीर रोगों के शिकार हुए|

केस स्टडी-3- मिनेमेटा (Minamata)- जापान की खाड़ी के निकट रहने वाले मछुआरे सन 1953 में अचानक एक रहस्यमय बीमारी से ग्रसित हो गए| इस बीमारी के लक्षण थे मांसपेशियों का कमजोर पड़ना, अन्धापन, पक्षाघात तथा अन्त में मृत्यु| इन पीड़ित व्यक्तियों में एक बात सामान थी कि सभी खाड़ी के जल में पायी जाने वाली मछली ख्काते थे| इन मछलियों में पारे (Hg) की उच्च सान्द्रता थी| **पारे (Hg)** के कारण उन्हें 'मिनेमेटा रोग' हो गया था| खाड़ी के जल में पारा मिनेमेटा खाड़ी के समीप प्लास्टिक कारखानों से पंहुचता था|

वन संरक्षण में लोगों की भागीदारी-

1. बिश्नोई परिवार का योगदान- जोधपुर के राजा ने सन 1731 में अपने महल के निर्माण के लिए वृस्खों को काटने का आदेश दिया था| जिस वन-क्षेत्र के वृक्षों को काटना था उसके आस-पास कुछ बिश्नोई परिवार रहते थे| एक परिवार की अमृता नामक महिला ने राजा के आदेश का विरोध किया एवं वृक्ष से चिपककर खड़ी हो गयी| उसका कहना था कि वृक्ष हमारी जान हैं| इनके बिना मेरा जिंदा रहना असंभव है| इन्हें काटने के लिए तुम्हे पहले हमें काटना होगा| राजा के लोगों ने वृक्ष के साथ-साथ उस महिला एवं उसके बाद उसकी तीन बेटियों तथा बिश्नोई परिवार के सैकड़ों लोगों को वृक्ष के पास कटवा दिया| भारत सरकार ने इस साहसी महिला, जिसने पर्यावरण की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि दे दी, के सम्मान में **अमृता देवी बिश्नोई वन्यजीव संरक्षण पुरस्कार** देना हाल में शुरू किया है| यह पुरस्कार ग्रामीण क्षेत्रों के ऐसे व्यक्तियों, समुदायों या संस्थाओं को दिया जाता है जो वन्यजीवों की रक्षा के लिए समर्पित हैं|

2. चिपको आन्दोलन (Chipko Movement)- चिपको आन्दोलन डॉ० सुन्दरलाल बहुगुणा की अगुवाई में शुरू हुआ| सन 1974 में हिमालय के गढ़वाल में जब ठेकेदारों व्दारा वृक्षों को काटने की प्रक्रिया आरम्भ हुई तो इन्हें बचाने के लिए स्थानीय महिलाओं ने अदम्य साहस का परिचय दिया| वे वृक्षों से चिपकी रहीं एवं वृक्षों को काटे जाने से रोकने में सफल रहीं| इसी प्रयास ने आन्दोलन का रूप लिया एवं चिपको आन्दोलन के रूप में विश्वविख्यात हुआ|

3. संयुक्त वन प्रबन्धन (Joint Forest Management)- वन संरक्षण में मानव की भागीदारी को समझकर भारत सरकार ने सन 1980 के दशक में संयुक्त वन प्रबन्धन लागू किया| इसका उद्देश्य यह है कि स्थानीय लोगों को साथ लेकर वनों की रक्षा एवं उचित प्रबन्धन किया जा सके| इस कार्य के बदले में वन-वृक्षों से पैदा होने वाले उत्पादों; जैसे- रबड़, दवाई, गोंद, फल आदि का लाभ उन्हें मिलता है|

MP BOOKSOLUTION.in